''मूल्य शिक्षा''

रश्मि कुमावत **डॉ प्रेमलता गाँधी**

जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डिम्ड)
विश्वविद्यालय प्रतापनगर उदयपुर

मानव एक सामाजिक प्राणी है उसके मूल्य, उसके गुण उसकी सत्प्रवृत्तियां ही उसे पशु व वनस्पति जगत से भिन्न बनाते है। जीवन व मूल्यों में मणि कांचन संयोग है, जिस प्रकार जल बिना मछली, आत्मा बिना शरीर व भाषा बिना मनोगत भाव महत्वहीन है, उसी प्रकार मूल्यों के बिना जीवन अर्थहीन हैं।

मूल्य मनुष्य के प्रत्येक चुनाव, निश्चय, निर्णय तथा कार्य में विद्यमान है। यह मानव अस्तित्व में किसी महत्वपूर्ण वस्तु का प्रतिनिधित्व करते है। मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना व वरीयता प्रकट करता है। यह एक ऐसी आचरण संहिता या सद्गुणों का समावेश है, जिसे अपनाकर व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास कर समाज में प्रभावशाली तथा विश्वसनीय बनकर उभरता है। मूल्य में मानव की धारणाएं, विचार, विश्वास, मनोवृति एवं आस्था आदि अन्त निहित होते है। मूल्यवान एवं मूल्यहीन होना ही प्रत्येक वस्तु की उपयोगिता एवं उपयोगहीनता को सिद्ध करता है। मूल्य के महत्व को प्रत्येक अवस्था में स्वीकार किया जाता है।

मूल्यों का ज्ञान वह पूँजी है जिसके आधार पर भारतीय संस्कृति आधारित है। प्राचीन काल में हमारे देश में गुरुकुल थे, पाठशालाएँ प्रकृति की गोद में बनी हुई थी। विद्यार्थी खुले आकाश के नीचे वृक्षों के तले बैठकर ज्ञान साधना के द्वारा सिद्धान्त तथा व्यवहार की शिक्षा प्राप्त करते थे। उन्हें धर्म तथा नीति की शिक्षा भी दी जाती थी। नैतिक एवं व्यावहारिक मूल्यों का महत्त्व विद्यार्थी को भली–भाँति समझाया जाता था। विद्यार्थी इन मूल्यों को धारण करता था। हमारे देश में नीति नियम थे, अनुशासन था, लोगों का आचरण नीति परक व मूल्यों से परिपूर्ण था तथा शारीरिक, मानसिक व्यवहार भी मूल्यों से ओतप्रोत था। मूल्य हमारी संस्कृति की नींव थे, जिस पर हमारे जीवन का चक्र निर्भर था।

मूल्यों की शिक्षा के लिए एवं विद्यार्थियों, अध्यापकों, प्रधानाध्यापकों की मूल्यों के प्रति अभिवृति, पालना, जानकारी एवं कक्षाओं में मूल्यक्रियाओं को ज्ञात करने के संदर्भ में शोधकार्य किया जाना आवश्यक है। कक्षाकक्ष में शिक्षण करते समय अध्यापक का अपने छात्रों के साथ एवं छात्रों का अपने मित्रों एवं सहपाठियों के साथ व्यवहार मूल्य है या नहीं? अध्यापक कक्षा–कक्ष में छात्रों के साथ स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व एवं न्यायपूर्ण व्यवहार करते हैं या नहीं? विद्यालय के प्रधानाध्यापक का अपने विद्यालय के अध्यापकों एवं छात्रों के साथ व्यवहार किस प्रकार का है? वे अपने विद्यालय में मूल्यों को विकसित करने के लिए किन–किन कार्यक्रमों एवं गतिविधियों का आयोजन करते हैं? इत्यादि। मूल्यभावना को धारण करके ही प्रत्येक व्यक्ति समाज की प्रगति में योगदान दे सकता है।

मूल्यों का अर्थ.

मूल्यों के निर्धारक धर्म एवं संस्कृति है और इनका अर्थापन दर्शन करता है। इस प्रकार मूल्यों की पृष्ठभूमि दर्शन, धर्म एवं संस्कृति है। इसलिए मूल्यों की सार्वभौमिक परिभाषा देना और उनका अर्थापन करना कठिन है। प्रत्येक दर्शन मूल्यों का अर्थापन अपने ढंग से करता है। समाज के अपने मूल्य होते हैं।

मूल्यों का वर्गीकरण

स्थूल रूप से मूल्य दो प्रकार के होते हैं परंपरागत मूल्य एवं व्यावहारिक मूल्य। कतिपय परम्परागत मूल्य जो अतीत में विशिष्ट एवं अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहे, किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में वे व्यावहारिक एवं उपयोगी साबित नहीं होते। उदाहरणार्थ हम 'अपरिग्रह' (संग्रह का त्याग) मूल्य को लें। हमारे प्राचीन भारत के इतिहास में विशेषतः जैन, बौद्ध धर्म के इतिहास में 'अपरिग्रह' की गणना पंचशीलों में की गई है, किन्तु आज के युग में कुछ वस्तुओं का संग्रह अनिवार्य सा हो गया है। अतः कुछ मूल्य परिवर्तनशील होते हैं। ऐसे मूल्यों को हमारे शास्त्रों में 'युगधर्म' की संज्ञा दी गई है। इनके विपरीत कतिपय मूल्य नैसर्गिक एवं शाश्वत होते हैं, जो युग के प्रवाह में नहीं बदलते। तुलना की दृष्टि से ऐसे मूल्य को हम 'शाश्वत मूल्य' कहते हैं।

इसी प्रकार हमारे यहाँ 'श्रुति' और 'स्मृति' की परंपरा है। 'श्रुति' का शाब्दिक अर्थ है– ज्ञान। यह वेदों का पर्यायवाची शब्द है। श्रुति का अनुसरण 'स्मृति' करती है। 'श्रुति' सनातन है, जबकि स्मृति परिवर्तनशील है। स्मृति में धर्मसम्बन्धी विविध विधि निषेधों का वर्णन मिलता है, जबकि श्रुति जीवन के जन्म, मरण, सत्य, प्रेम, अहिंसा, त्याग, परमार्थ, उदारता, सहिष्णुता, सरलता आदि शाश्वत मूल्यों से सम्बद्ध है। ये नैसर्गिक मूल्य शाश्वत हैं। युग परिवर्तन से ये मूल्य प्रभावित नहीं होते। युगधर्म अवश्य ही युग क्रम से परिवर्तित होते हैं। सतयुग में मनुष्यों के युगधर्म कुछ और थे एवं त्रेतायुग में कुछ और हो गए। ये मूल्य द्वापर युग में जो थे, वे कलियुग में नहीं रहे। सतयुग से वर्तमान कलियुग तक हम मूल्यों का निरंतर ह्रास ही पाते हैं।

वर्तमान भारतीय समाज के मूल्य

संयुक्त राष्ट्र संगठन के सबसे बड़े शैक्षिक और सांस्कृतिक संघ युनेस्को ने स्वीकार किया है– ''नैतिक शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें समाज अपने–अपने सदस्यों को सही व्यवहार की शिक्षा प्रदान करता है। कोई भी समाज नैतिक मानकों के अभाव में अस्तित्व नहीं रख सकता है।''

मानव–समाज में सदा से मूल्यों, आदर्शो और चिन्तन की व्यवस्था रही है। मानव की यह विशेषता है कि वह व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन के लिए लक्ष्य, आदर्श और व्यवहार के प्रतिमान निर्धारित करता है और उन्हीं के अनुरूप परम्परा बन जाते है। प्रत्येक समाज के विचारने, अनुभूति करने और व्यवहार करने की अनूठी सुगन्ध होती है, विशिष्टता होती है, केन्द्र–भाव होता है। संस्कृति वह दर्पण है जिसमें पूरे समाज का प्रतिबिम्ब होता है। संस्कृति के माध्यम से किसी समाज के व्यक्तित्व का अध्ययन किया जा सकता है, क्योंकि संस्कृति

वह है जो व्यक्ति और समाज होना चाहते है। संस्कृति का एक विशिष्ट संगठक अंग है ''आचरण–संहिता'', जो उस समाज के नीतिशास्त्र का विषय होती है। हर समाज में नीतिशास्त्रीय दृष्टि से सम्यक् आचरण की कसौटियाँ परिभाषित ओर निर्धारित होती है।

मूल्य की परिभाषाएँ

डी.एच. पार्कर के विचारानुसार– *''मूल्य पूर्णतया: मन के साथ सम्बंधित है। इच्छा की पूर्ति वास्तविक मूल्य है, जिससे वह इच्छा पूरी होती है वह केवल साधन है। मूल्य का सम्बंध हमेशा अनुभव से होता है, किसी वस्तु के साथ नहीं।''*

"Values belong wholly to the inner world or mind. The satisfaction of desire in the real value, the thing that serves is only an instrument. A value is always an experience, never a thing or an object".

- **ब्रुबेकर के अनुसार–** *''किसी के शिक्षा–उद्देश्यों को व्यक्त करना वस्तुत: उसके शिक्षा मूल्यों को व्यक्त करना है।''*

"To state one's aims of education is at once to state his educational values."

- **कनिंघम के मतानुसार–** *''शिक्षा–मूल्य शिक्षा के उद्देश्य बन जाते हैं। इन्हीं के अनुसार व्यक्ति के उन गुणों, योग्यताओं तथा क्षमताओं को विकसित किया जाता है। जो वस्तुत: जीवन–मूल्यों में निहित होते हैं।''*
- *"Educational values become aims of education. According to these qualities, abilites and capacities are promoted in the individuals, which are inherently values of life."*
- **- Cunnigham**

मूल्य के रूप

मूल्य के दो रूप हैं– आन्तरिक मूल्य और बाह्म मूल्य अथवा परम मूल्य और निमित्त मूल्य अथवा स्थायी मूल्य और अस्थायी मूल्य एवं साध्यगत तथा साधनगत मूल्य साध्य मूल्य, परम मूल्य और आन्तरिक मूल्य स्थायी एवं अपने आप में साध्य हैं। साध्य मूल्य, निमित्त मूल्य और बाध्य मूल्य अस्थायी और साधन–मात्र हैं। जो वस्तु अपने आप में शुभ है वह परम मूल्य रखती है। जो किसी शुभ का साधन–मात्र है, उसका मूल्य निमित्त है। सभी दुखद वस्तुओं का व्यावहारिक मूल्य है। वस्तुओं का मूल्य परम मूल्य की प्राप्ति में उनकी उपयोगिता पर निर्भर है।

मूल्य के प्रकार

मूल्य चार प्रकार के हैं– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इनमें प्रथम तीन इहलोक और अन्तिम 'मोक्ष' परलोक से सम्बन्धित है। प्रथम तीन के उचित और धर्मसंगत ढंग से पालन से ही अन्तिम की पूर्ति हो सकती है।

1. धर्म :–

धर्म सबसे महत्त्वपूर्ण तथा आधारभूत मूल्य है। इसकी पूर्ति के बिना किसी को समुचित ढंग से पूरा नहीं किया जा सकता है। यह मनुष्य के सम्पूर्ण नैतिक जीवन से सम्बद्ध है तथा उसकी आवश्यकताओं और इच्छाओं को व्यवस्थित, नियमित एवं संयोजित कर समाज में संघर्ष की स्थिति रोकता है और नैतिकता एवं आध्यात्मिकता का वातावरण तैयार करता है। यह मानवीय आदर्शों एवं मूल्यों के बीच समन्वय स्थापित करता है। इससे इहलोक और परलोक दोनों में व्यक्ति का कल्याण और अभ्युदय होता है। हिन्दू जीवन दर्शन के अनुसार, धर्म मात्र अलौकिक शक्ति के प्रति विश्वास से सम्बद्ध नहीं है, यह एक वैज्ञानिक तथ्य है।

पी.बी. काणे के अनुसार– *''धर्म से तात्पर्य कोई विशेष ईश्वरीय मत नहीं बल्कि जीवन का तरीका या आचरण की संहिता है जो स्वयं व्यक्ति के रूप में तथा समाज के एक सदस्य के रूप में एक व्यक्ति के कार्यों एवं क्रियाओं को नियमित या नियंत्रित करती है और जिसका उद्देश्य व्यक्ति का क्रमबद्ध विकास करना तथा उसे इस योग्य बनाना है कि मानव जीवन के अन्तिम लक्ष्य तक पहुँच सके।''*

2. अर्थ :–

हिन्दू जीवन दर्शन के अन्तर्गत 'अर्थ' को मूल्य का दूसरा चरण स्वीका किया गया हैं। यह दर्शन मानव जीवन के सम्पूर्ण का दर्शन है। इसने किसी पक्ष की उपेक्षा नहीं की है। हिन्दू धर्मशास्त्रों ने, जिन्होंने हिन्दू जीवन दर्शन का निर्धारण किया है, मानव जीवन' को केवल धर्म अर्थात् नैतिक कर्त्तव्यों के पालन तक ही सीमित नहीं किया है बल्कि उसके द्वारा धर्मानुसार भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति पर भी बल दिया हैं। इससे धर्म के बाद अर्थ को ही महत्त्व प्रदान किया है क्योंकि बिना उसके धर्म का पालन तथा मोक्ष–प्राप्ति सम्भव नहीं है।

पी.एन. प्रभु के शब्द में– *''अर्थ का तात्पर्य उन सभी उपकरणों अथवा भौतिक साधनों से है जो सांसारिक समृद्धि प्राप्त करने के लिए आवश्यक है।''*

बी. जी. गोखले ने ऋग्वेद के आधार पर लाभ, धन और सुविधा आदि को धन के अन्तर्गत लिया है।

3. काम:–

मूल्यों में तीसरा स्थान 'काम' को दिया गया है। यद्यपि हिन्दू जीवन दर्शन ने मानवीय जीवन में इसका महत्त्व स्वीकार किया है तथापि सर्वप्रमुख और अन्तिम मूल्य 'मोक्ष' की प्राप्ति के साधनों में इसे निम्नतम् स्थान प्रदान किया है। फिर भी यह एक ऐसा पुरुषार्थ है जिसकी उपेक्षा की अनुमति नहीं प्रदान की गयी है। विभिन्न विद्वानों ने इसकी अलग–अलग परिभाषाएँ की हैं। उनमें से कुछ ने इसे संकुचित और कुछ ने व्यापक अर्थ में लिया है।

संकुचित अर्थ में इसे इन्द्रिय सुख और यौन सम्बन्धी इच्छाओं की पूर्ति तक की सीमित किया गया है। व्यापक अर्थ में सभी प्रवृत्तियों, इच्छाओं और कामनाओं को इसके अन्तर्गत शामिल किया गया है। इसके अनुसार, शारीरिक, मानसिक और इन्द्रिय सुख से सम्बन्धित जो कामनाएँ और इच्छाएँ हैं, वे सभी इसके अन्तर्गत आती है, क्योंकि वे प्रेरक और उद्दीपक हैं तथा मनुष्य को भोग के लिए प्रेरित करती है।

4. मोक्ष :–

हिन्दू धर्मशास्त्रों ने धर्म और काम का महत्त्व स्वीकार करते हुए इनकी उपेक्षा करने की अनुमति नहीं प्रदान की है। परन्तु उन्होंने इन्हें मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य नहीं माना है। उनके अनुसार, मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष है। यह अन्तिम परन्तु सर्वप्रथम और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मूल्य है क्योंकि हिन्दू जीवन दर्शन के अनुसार, मनुष्य का अन्तिम और वास्तविक लक्ष्य इसकी प्राप्ति है। इसी के लिए अन्य मूल्य की व्यवस्था की गयी है। अन्य मूल्य स्थायी और वास्तविक आनन्द नहीं प्रदान करते हैं। इसकी प्राप्ति तो मोक्ष के बाद ही होती है। मोटे रूप में आवागमन अर्थात् जन्म–मृत्यु के चक्र से मुक्त होकर परमात्मा में लीन हो जाना ही मोक्ष है। परन्तु सांख्य दर्शन, गीता, वेदान्त दर्शन तथा विभिन्न विचारकों ने मोक्ष की भिन्न–भिन्न परिभाषाएँ की हैं।

सांख्य दर्शन के अनुसार, प्रकृति की माया के प्रभाव से मुक्ति तथा कैवल्यता (बन्धनों से छुटकारा) की स्थिति प्राप्त कर लेना ही मोक्ष हैं। इनके अनुसार, पुरुष कार्य का कर्ता नहीं है। उसके द्वारा जो होता है, वह प्रकृति का ही खेल है। मन और बुद्धि भी उसी के ही विकार हैं अर्थात् उसके मायाजाल से वे प्रभावित होते हैं। उसके कार्यों के फलस्वरूप ही पुरुष को ज्ञान प्राप्त होता है। वह तीन प्रकार का होता है– सात्त्विक, राजसिक, तामसिक।

श्री राधाकृष्णन के कथनानुसार– ''भारत सहित सारा विश्व इसलिये कठिनाइयों से गुजर रहा है, क्योंकि हमारी शिक्षा केवल बौद्धिक व्यायाम बन कर रह गई है और उसमें नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का कोई स्थान नहीं है।''

आज नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों का पतन हो रहा है, धर्म की पकड़ कमजोर हो रही है, स्वार्थ के लिये शक्ति एवं ज्ञान का दुरुपयोग हो रहा है, राष्ट्रों का एक–दूसरे पर विश्वास नहीं है–ऐसी स्थिति में शिक्षा नैतिक मूल्यों के लिये दी जानी चाहिए।

नैतिकता उन सिद्धांतों की संहिता है जो उत्तम जीवन जीने के लिए आवश्यक है। व्यक्ति के जीवन के लिये नैतिक मूल्यों का महत्त्व अत्यधिक है। इन्हीं के आधार पर व्यक्ति के चरित्र का निर्माण होता है।

नैतिक मूल्य निम्नलिखित हैं –

ईमानदारी :– 'ईमानदारी सर्वोत्तम नीति है' यह एक प्रख्यात कहावत है। य चरित्र एवं मानवीय अन्तर्क्रियाओं का आधार है। बचपन से ही व्यक्ति में इसका निर्माण किया जाना चाहिए।

नैतिक स्थिरता:– व्यक्ति को नैतिक रूप से स्थिर होना चाहिए। नैतिक स्थिरता के बिना कोई भी मनुष्य सच्चे अर्थों में मनुष्य कहलाने का अधिकारी नहीं हो सकता। नैतिकता मनुष्य के भीतर से विकसित होनी चाहिए।

अच्छा चरित्र :– अच्छा चरित्र एवं आचरण महत्त्वपूर्ण नैतिक मूल्य हैं। अच्छे चरित्र में वे सभी गुण सम्मिलित हैं जिनकी मनुष्य कल्पना कर सकता है, जैसे–आत्म–नियन्त्रण, विश्वसनीयता, कर्मशीलता, परिश्रम, आत्म–निष्ठा, उत्तरदायित्व की भावना, सत्यता, सहनशीलता, मद्य–निषेध आदि। अच्छे विचारों एवं कार्यों में समरसता होनी चाहिए।

सत्यता :– जीवन में सत्यता का अनुपम महत्त्व है। व्यक्ति को अपने प्रति, अपनी आत्मा के प्रति, अपने परिवार, मित्रों, पड़ोसियों, समाज, राष्ट्र एवं मानवता के प्रति सत्यता का पालन करना चाहिए। सत्यता के मूल्य का निर्माण भी बचपन से किया जाना चाहिए।

अन्य नैतिक मूल्य – (1) दूसरों का ध्यान रखना, (2) करुणा, (3) अच्छा आचरण, (4) दया, (5) अहिंसा, (6) पवित्रता, (7) सहानुभूति, (8) समाज–सेवा, (9) सादा जीवन एवं उच्च विचार, (10) स्थिरता, (11) आत्म–संयम, (12) विनम्रता, (13) साहसपूर्ण आस्थाएँ और (14) ईश्वर का भय।

सांस्कृतिक मूल्य :– प्रत्येक संस्कृति के अपने कुछ मूल्य होते हैं। मैकाइवर एवं पेज के कथनानुसार, ''संस्कृतिक शैलियों, मूल्यों, भावात्मक सम्बन्धों तथा बौद्धिक साहसिक कार्यों का समूह है।''

मूल्यों की विशेषताएँ

- मूल्यों की प्रकृति, दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, मानवीय तथा परिस्थितिकी होती है।
- मूल्य जैविक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक होते हैं।
- भारतीय साहित्य में पाँच मूल्य– सत्य, धर्म, शान्ति तथा अहिंसा का उल्लेख किया है। मानव मूल्य पंचप्राण माने जाते हैं।
- मूल्य के तीन तत्त्व– क्रिया भाव तथा ज्ञान होते हैं।
- समाज द्वारा अनुमोदित इच्छाएँ तथा लक्ष्य मूल्य माने जाते हैं।
- मूल्य सामाजिक मानक तथा मानदण्ड होते हैं।
- मूल्य सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों प्रकार के होते हैं।
- मूल्य आकांक्षाएँ इच्छाएँ, अभिप्रेरणाओं तथा आवश्यकताओं के रूप में होते हैं।
- मूल्य शिक्षा के लक्ष्य होते हैं।
- मूल्यों के अन्तर्गत, अनुबद्धन, अधिगम तथा सामाजीकरण की आन्तरिक प्रक्रिया होती है।
- मूल्यों में भावात्मक निर्णय तथा सामन्यीकृत भावनाएँ होती है।
- मूल्यों में मानवीय इच्छाओं की संतुष्टि होती है।

- मूल्यों का सम्बन्ध आन्तरिक इच्छाओं से होता है।
- अंतिम मूल्य 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' होते हैं यही जीवन के अंतिम लक्ष्य भी होते हैं।
- मूल्यों के निर्धारक धर्म, संस्कृति तथा समाज होते हैं।
- मूल्यों का विकास सामाजिक परम्पराओं, धार्मिक क्रियाओं तथा शैक्षिक प्रक्रिया से किया जाता है।

सी.वी.गुड के अनुसार– *''मूल्य वह चारित्रिक विशेषता है जो मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और सौन्दर्य बोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। लगभग सभी विचारक मूल्यों के अभीष्ट चरित्र को स्वीकार करते है।''*

वस्तुतः मूल्य वे मानक या नैतिक व्यवहार की आचार–संहिताएं है जो संस्कृति से निकली और परम्पराओं द्वारा पोषित तथा आत्म–चेतना अथवा अन्तः करण द्वारा संरक्षित होती है। मूल्य ही जीवन को सार्थक बनाते है। प्रत्येक समाज की एक मूल्य प्रणाली होती है इसी मूल्य प्रणाली को 'संस्कृति' कहते है।